॥ श्रीः ॥

प्रह्लादचरित्र-नाटक।

लाला श्रीनिवासदासजीकृत.

वही

श्रीयुत मंगीलालजीकी आज्ञानुसार,

खेमराज श्रीकृष्णदासने

बंबई

निज "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्-यंत्रालयमें

मुद्रितकर प्रसिद्ध किया।

संवत् १९६६, शके १८३१.

प्रस्तावना.

हा दैव ! मंद जड दुर्गत हे शठ ! त्वं
कां कां करोषि भुवनस्य विचित्रचेष्टाम् ।
रम्यान्पुरन्दरवनीहरिणान्करोषि
शोच्यान्पिशाचचरितान्भुवि संतनोषि ॥ १ ॥

अस्मद्भारतखण्डमण्डितयशा राजाधिराजाश्रितः
श्रीमान्सच्चरितः सदाजनमनःसंपादकैकाकृतिः ।
अस्माकं हतदैवतापरिणतेरुच्छिन्नभूमण्डलः
श्रीनारायणदास एष जयति श्रीपीठसन्मन्दिरे ॥ २ ॥

तं यावत्परिशोचाति प्रविसरन्नेत्राम्बुधारो जनो
यावद्विस्मरति प्रियं नहि पुनः क्षुभ्यत्करालायुधः ।
कालः कोमलचित्तसच्चरितकृद्विद्वद्वरेण्यं लघु
श्रीमन्तं दृगगोचरं निरकरोच्छ्रीश्रीनिवासानुगम् ॥ ३ ॥

हा हंत !! प्रियविप्रियं कथमहं सोढुं समर्थोऽभवं
नो मे किञ्चिदकारि तत्प्रियतमं, ताभ्यां परं प्यायितः ।
यन्मे दुर्गतिनीरधिप्रपातितस्यैतौ हि सन्नाविकौ
याभ्यां दिक्तटभूमिविश्रुतयशोभ्यां क्षिप्रमुत्तारितः ॥ ४ ॥

अस्तु मानस ! दुःखेन परीतं जायसे वृथा ।
तथापि किं पुनर्मित्ररत्ने पश्यसि रे ! हते ॥ ५ ॥

भवतु भवतु सर्वं मा विषादं प्रयातु
गतवति जगदीशे कः समर्थोऽत्ररोद्धु ।

सकलमपि जगद्वै दृश्यतां यद्धि यातं
तदनतिचिरवृत्ति स्थातुमत्र प्रसक्तम् ॥ ६ ॥
अक्षय्यवंशस्तस्यायं श्रीनिवासस्य राजताम् ।
इति मित्रप्रियैषित्वान्मया मुद्रापितं बुधाः ॥ ७ ॥

उपरोक्त श्लोकोंका भावार्थ ।

हे मूढ जड दुष्टभाग्य ! तू संसारकी क्या २ विचित्र लीला करताहै. भले लोगोंको नन्दन काननके हरिण बनाताहै और खेदयोग्य राक्षसोंकेसे आचरण वालोंको पृथ्वीमें उत्पन्न करताहै ॥१॥ हमारे भारतवर्षमें जिनके यशकी पताका फहरा रही है राजाधिराजके आश्रित, सच्चरित्र, सदा मनुष्योंके मनको अपने मधुर भाषणसे हरलेने वाले, हमारे दुर्भाग्यसे पृथ्वीसे सम्बन्ध तोडनेवाले, श्री पीठके सुन्दर मन्दिरमें रहनेवाले उन नारायण दासजीकाजय हो ॥ २ ॥ जैत्र नक आँसुओंकी धार बहाते हुए लोग उनके शोकसे सन्तप्तहीथे और उनका नहीं भूलने पायेथे कि कराल काल कोमल चित्तवाले, सदाचार, दाता, श्रीनिवासजीके छोटे भाईकोभी आँखोंके सामनेसे हरलेगया ॥३॥ बड़ा खेदहै मैं ऐसे प्यारोंका वियोग कैसे सहूं, उन दोनोंने मेरा बड़ा उपकार कियाथा दुर्दशारूपी समुद्रमें पड़ेहुए मेरे वह दोनों मल्लाहकी तरहथे उनका कुछभी भला मैं न कर सका । उन्होंने तौ दारिद्रयरूपी समुद्रसे मुझे उतारही दियाथा ॥ ४ ॥ अच्छा हे मन ! व्यर्थ ही दुःखी होते हो क्या अब खोयेहुए मित्ररत्नोंको पासकते हो ? ॥ ५ ॥ होना जो हो सो हो दुःख नहीं करना चाहिये । संसारका स्वामी चलाजाय तो उसे कौन रोक सकताहै । यह सभी संसार जानेवालाहै वह यहां अधिक विलम्बतक ठहर नहीं सकता ॥ ६ ॥ उस श्रीनिवासका यह अविनाशीकुल शोभितहो इससे अपने मित्रके प्रिय चाहनेसे मैंने यह छपाया ॥ ७ ॥

मंगीलाल.

॥ श्रीः ॥

॥ श्रीनृसिंहाय नमः ॥

प्रह्लादचरित्र-नाटक।

प्रथमदृश्य १.

स्थान वैकुण्ठ.

(द्वारपर जय विजय द्वारपाल खडे हैं)

सनकादि मुनियोंका प्रवेश.

सनकादि-श्रीपति चरणदरश कब पैहैं? ॥
अरुण नील अंभोजसरिस पद लख भवताप नशैहैं ॥
वज्रांकुश अंकित महेशप्रिय कब नयननपथ ऐहैं ॥
गंगजनक सेवक सुखदाता कब निजदास बनैहैं ॥

सनंदन-जय विजय! क्षणभरका वियोग नहीं सहा जाता कृपा करके द्वार मुक्त करो जिससे दयामय हरिके दर्शन करके नयन सफल करें।

जये–तपोधन ! वैकुण्ठनाथकी आज्ञा बिना द्वार मुक्त करना हमारी सामर्थ्यसे बाहर है ।

सनातन–क्या ब्रह्मण्यदेव श्रीहरिने हमारे प्रवेशकी नाहीं करी है ? जो दयासागर सर्वेश्वर भक्तिपरवश हो. शरणागतजनोंकी रक्षाके लिये निजलोक त्याग पापपूर्ण पृथ्वीपर पदार्पण करते हैं, जिनकी अनिर्वचनीय कृपा संसारी जीवोंको अंगीकार करनेके लिये उनके अज्ञात सुकृतका मिस ढूँढतीहै, जो सदा विमुख जीवोंके दुःखसे दुःखित होकर उनकी रक्षाके लिये उनकी रुचिमात्रका अवलंब चाहते हैं, वह हमसे अधमजनोंको निजचरणोंमें आते देखकर कसे नाहीं करेंगे ?

विजय–तो क्या हम झूंठ बोलते हैं ? सेवकधर्म अतिकठिन है. प्रभुकी दीनदयालुतामें संदेह नहीं परंतु सेवक परवश है वह स्वामीकी आज्ञा बिना क्या करसक्ता है ?

सनत्कुमार–दुष्ट ! तुम्हारी आसुरी बुद्धि है, तुमको अपनी बुद्धिमानीका बड़ा अहंकार है, तुमको स्वामीकी दयालुतापर विश्वास नहीं, तुम आर्त्तशरणागतोंकी त्वरा नहीं जानते; इसलिये तुम यहां रहने योग्य नहीं हो तुम पृथ्वीपर जाकर असुरयोनिमें जन्म लो।

जय विजय–(हाथ जोड़कर) ऋषिराज ! क्षमा करिये, हमसे अपराध हुआ हमारी बुद्धि जाती रही।

सनत्कुमार–हम लोगोंके स्वभावमें भी क्रोध नहीं और यह क्रोधका स्थान नहीं। न जाने किस हेतु हमको सहसा क्रोध आगया. भगवत् इच्छा प्रबल है हमारा शाप मिथ्या नहीं हो सक्ता, तुमको राक्षसयोनिमें तीन जन्म धारण करने पडेंगे।

(सहसा द्वार उन्मोचित होकर दिव्यरूपसे लक्ष्मीनारायण दर्शन देते हैं)

नारायण–(सनकादिसे) मुनिवर! क्षमा करो क्षमा करो किसी सेवकसे कोई अपराध बनजाता है उसका

स्वामीभी अपराधका भागी गिनाजाताहै, इन दुष्टोंने घोर अपराध किया, हमारे भक्तोंपर हमारी प्रभुता कुछ नहीं चलती, भक्तोंके लिये हम लक्ष्मीकाभी परित्याग करदेते हैं, कोई हमारा अपराध करै तो हमको सह्य है, परन्तु हमारे भक्तोंका अपराध हमसें सर्वथा नहीं सहाजाता। जय विजय हमारे निजद्वारपाल हैं तोभी इस अपराधके कारण इनका वध करनेके लियें हम आप अवतार लेंगे जिससे इन्होंने आपलोगोंका अपराध किया है, उसका आंशिक फल हमको मिलेगा और हमारे असह्यापचारका दंड हमारी ओरसे इनको मिलजायगा ।

सनकादि—(दण्डवत प्रणाम करके) दीनबंधो ! दया करिये । निजजनोंके अपराधको भोग्यमाननेकी वत्सलता आपहीमें पाई जाती है. हम अपराधी क्रोधादि शत्रुओंके बश होकर स्वामीको श्रम देने वाले किस मुखसे आपकी स्तुति करें ।

श्रीनारायण—संसारके सब काम हमारी इच्छासे होतेहैं, परन्तु मूर्ख उनको अपनी करनी मानकर उनका भार अपने शिर लेलेतेहैं, तब हमभी उनकी ओरसे निश्चिन्त होकर उनके कर्मानुसार फल उनको दिये जाते हैं, ज्ञानी सब बातोंमें हमारी इच्छापर रहकर सुखदुःखका हर्ष विषाद नहीं करते। इसलिये आप इन बातोंका सर्वथा खेद मत करो आपके स्वभावमें क्रोध नहीं था यह सब बातें हमारी इच्छानुसार हुईहैं।

सनक—तो प्रभु! आपका स्वरूप सच्चिदानन्दघन हैं आप प्राणीमात्रके हितमें सदा तत्पर रहते हो फिर आपकी इच्छासे जयविजयके लिये ऐसा क्यों हुआ?

श्रीनारायण—मुनिवर! यह सिद्धांत सत्य है परन्तु हमारी माया अपरंपार है, इसका मर्म जाननेकी इच्छा करनेवाले मार्कंडेय (ऋषि) की भाँति गोता खाते हैं जहां मनुष्योंकी बुद्धि नहीं पहुँची तहां वह अपनी मनमानी बातें घटालेते हैं, परन्तु उनका न अतिसूक्ष्म और आच्छादित है इसलिये वह

हमारा भाव यथार्थ नहीं समझ सक्ते । जय विजयको इतना दण्ड होनेसे प्रथम तो शरणागतिका माहात्म्य प्रगट होगा, दूसरे ये हमारी प्राप्तिके सुखका विभव नहीं जानतेथे सो जान जायँगे. परिणाममें इनको इनका पद मिल जायगा इसकारण इनकी कुछ हानि न होगी, परंतु हमारे निजपार्षदोंके अंश बिना प्रह्लाद जैसे भागवत शिरोमणिका जन्म असंभव था. इसलिये यह शाप संसारको हितकारी होगा ।

सनंदन--तो क्या प्रह्लादके जन्मसे संसारका कुछ हितसंभव है ?

श्रीनारायण–निस्संदेह (प्रह्लादचरित्र) संसारी जीवोंके उद्धारके लिये एक उत्तम दृष्टांत होगा । वह धनहानि,मानहानि, पितृकोप, राजभय, समाजभय, प्राणभय छोड अकुतोभय हो सत्यका पक्ष. धर्ममें आस्था और हमारे चरणारविंदमें दृढ विश्वास दिखावेगा. परोपकारबुद्धिसे संसारी जीवोंकी मुक्तिके लिये आप नरकवास अंगीकार करेगा, उसके दर्शनसेही

नहीं उसके चरित्रोंका अनुभव करनेसे भी संसारी जीव मुक्त होंगे।

(पुष्पवृष्टि.)

सनकादिक--प्रभु! आपकी अपार महिमा है जब शिव ब्रह्मादिक देवता आपके मोहनी मंत्रसे मोहित हो निजस्वरूप भूल जाते हैं तब और जीवोंकी क्या गिनती है, हमतो आपके चरणारविंदमें मस्तक रखकर बारंबार यही प्रार्थना करते हैं कि, प्रारब्धवश हमारी कुछ दशा हो हमारा मन आपके चरणकमल छोडकर कभी क्षणभरके लिये विषयान्तरमें न जाय।

जय जय प्रणतहित भक्तवत्सल दयामय करुणाकरे ॥
पतितपावन कृपासिंधु स्वतंत्र सर्वेश्वर हरे ॥
निगम नारद शेष शारद ब्रह्म हर नित गावहीं ॥
अगम मायातीत महिमा अंत कोउ न पावहीं ॥
सो दासहित निजलोक तजि बहु देहधर प्रभु आवहीं ॥
निज न्यूनता कर सकल विध सेवक महत्व बढावहीं ॥
प्रभुकी विनयकिहिंविधिकरहिं हमतुच्छभांतिबालकखरे

निज बिरदके दिश देख भवदुख मेटिये धरणीधरे ॥
जिन गुणन रीझहु नाथ सो सुपने न हमपै पाइये ॥
पामर अकिंचन शरण लख निजदासदास बनाइये ॥
दीजियें यह वर कृपाकर अन्य विषय न मति रहै ॥
स्तन्य वत्सहि धेनु ज्यों प्रभु पादपंकज रति रहै ॥
जहां जावहिं कर्मवश तहँ एक श्रीपति मति रहै ॥
पक्षबिन खगशिशुहि खगतज और कापै गति रहै ॥
दीनबंधु कृपालु करुणासिंधु त्रिभुवन नाथ जू ॥
राखिये निजशरण आरत जान करिय सनाथ जू ॥

(भगवानके चरणोंमें गिरते हैं)

श्रीनारायण–(उठाकर) ऋषिराज ! हम आपसे बहुत प्रसन्न हैं आपको संसारि माया मोह कभी नहीं आवेगा।

सनकादि–प्रभु! यह तो गौणपक्ष हुआ संसारसे निवृत्त होकरआपके चरणकमलमें दृढभक्ति होनी चाहिये

श्रीनारायण–(मुस्कुराकर) ऐसाही होगा।

सनकादि–(बारंबार चरणोंमें पडकर) नाथ ! आपकी मनोहर मूर्त्तिका ध्यान हमारे हृदयसे क्षणभरको दूर न होय ।

श्रीनारायण–मुनिवर ! हम तो भक्तपरवश हैं, जैसी उनकी इच्छा होती है तैसे रहते हैं, जहां वे स्मरण करते हैं तहां तत्काल पहुँचते हैं फिर हमारे लिये इतनी भावना क्यों ?

सनकादि–(हाथ जोडकर) स्वामी ! यह परतंत्रता आपकी स्वतंत्रताके योग्यही है (प्रणाम और परिक्रमा करके जाते हैं)

इति प्रस्तावना.

द्वितीयदृश्य २.

राजमहलका चौक.

प्रह्लाद--रे मनं हरिभज, हरिभज, हरिभज।
जगतजालमें भूलनफँसियेकपटमोहमायामदछलतज।
दृढविश्वासआशहरिपदकरदयाशीलसंतोषसाजसज।
जापदरजसोंतरीअहल्याभालतिलकधारणकरसोरज।

मातानें मेरे मस्तकपर तिलक लगादिया है परन्तु यह तिलक साधुसम्मत नहीं और. पहले महात्माओंके मार्गपर चलेबिना श्रीचरणकी प्राप्तिभी सहज नहीं! आहा! जो कहीं हरिपादांकित धूलि मिलजाय तो मैं उसका तिलक लगाऊं परंतु मुझसे नीच दैत्यकुलबालकको वह रज कहाँ मिलैगी? (आगे-चरणचिह्न देखकर) देखो, देखो! यह वोही वज्रांकुश अंकित चरणचिह्न शोभायमान है, धन्य प्रभु! धन्य! दीनदयाल दासके चित्तमें आशालताके अंकुरित होनेसे पहले उसका सफल करदेना आपहीसे

हो सक्ता है। प्रह्लाद रे! एकबार प्रीतिपूर्वक हरिनाम संकीर्त्तन कर (करतालदेकर नाचते नाचते स्वरसे) हरि बोल! हरि बोल!! हरि बोल !!! (धूलि उठाकर) हरिकी अपरंपार दयाका वर्णन मेरे छोटे मुखसे कैसे होसके ? निस्संदेह मुझको अज्ञान बालक जानकर दयासागर इतनी दया करते होंगे, मेरेलिये इससे बढकर सौभाग्यकी बात और क्या हो सक्ती है? जिस रजके लिये शिव विरंचि तरसते हैं, जो रज लक्ष्मीजीकी मांगका सिंदूर है, जिस रजके प्रतापसे अगणित पापी मुक्त होगये वह रज आज प्रह्लादके मस्तकका तिलक हुई धन्य प्रह्लाद! धन्य !!आज तू हरिकी निर्हेतुक कृपासे कृतार्थ होगया (तिलक करके स्वरसे)

हरि बोल ! हरि बोल ! ! हरि बोल ! ! !

(फिर करताल देकर नाचते नाचते)

हरि बोल ! हरि बोल ! ! हरि बोल ! ! !

(कयाधुका प्रवेश)

कयाधु–बेटा ! यह क्या कहता है ? चुप चुप इससे सर्वनाश हो जायगा ।

प्रह्लाद–क्यों मा ! मैंने क्या बुरा कहा ? जो हरिभजनसे सर्वनाश होजायगा तो रक्षा काहेसे !होगी

कयाधु–वत्स ! हरि दैत्यकुलवैरी हैं इस कारण महाराज जिसके मुखसे हरिनाम सुनतेहैं, उसे तत्काल मरवाडालते हैं, जो तेरे मुखसे हरिनाम सुनेंगे तोतुझेभी मरवा डालेंगे । क०–(स्वगत) हाय ! मैं अपने प्यारे पुत्रकी कैसे रक्षा करूं ?

प्रह्लाद–माता ! क्या भय है ? संसारमें हरिसे बडा कोई नहीं है, जिसके हरि रक्षक हैं उसे कोई नहीं मार सक्ता है ।

कयाधु–वत्स ! बहुतंसे हरिभक्त महाराजके हाथसे मारे गये, हरिने किसीकी रक्षा न की भल तलवारकी कठिन धारसे हरि किसीको कैसे बचासक्ते हैं ?

प्रह्लाद–मा ! मा ! ऐसी नास्तिक बुद्धि मत करै. देख जो लोग मारे गये हैं उनको हरिचरणोंमें दृढ विश्वास न होगा । अथवा वह अपने आपको कर्त्ता मानते होंगे उनको अपनी सामर्थ्यका कुछ भरोसा होगा अथवा वह अपनाया और किसीकी सहायताका घमण्ड रखते होंगे. दयालु हरिको चमत्कार दिखाकर अपनी उपासना करानेका कुछ लालच नहीं है इसलिये वह इन बातोंकी वासना पाकर संसारके नियमानुसार उसका बिधानकर देतेहैं इसीसे नास्तिकोंको श्रीहरिकी महिमा जांनना दुर्लभ होतीहै परंतु जो लोग सच्चे मनसे सर्व प्रकार हरिपर भरोसा कर बैठतेहैं, जो लोग सबदशाओंमें हरिइच्छापर प्रसन्न रहते हैं, जिह्नोंने अपना सर्वस्व हरिको समझ रक्खा है, उनकी प्रत्यक्ष हानि लाभका भेद मनुष्यकी तुच्छबुद्धिमें आओ अथवा न आओ उनका अहित कोई नहीं करसक्ता तलवारकी कठिन धारसे क्या ? यमदण्डसेभी उनको कुछ भय नहीं है ।

कयाधु–बेटा ! ये शास्त्रकी बातें तो मेरी समझमें नहीं आतीं परंतु प्रत्यक्षमें महाराजका क्रोध याद करके भयसे मेरा चित्त आकुल होताहैं. मेरा दुःख मैंहीं जानती हूं. तू अपनी माका वचन मान यह हठ छोडदे.

प्रह्लाद–मा ! हरि मेरे प्राणमय हो गये अब प्राण दियेसें भी अलग नहीं होसक्ते जो भावी है सो होगा तू वृथा चिन्ता मत कर ।

जानकी जीवनकी बलि जैहों ।

चातक हों हरिश्याम घटा तज अब न अनत पग दैहों॥
उपजीउर प्रतीति सुपनेहुँ सुख प्रभुपद विमुखन पैहों॥
मनसमेत या तनुके वासिन यही सिखावन दैहों ॥
श्रवण न और कथा नहिं सुनिहों रसना और न गैहों॥
रुकिहों नैन विलोकत औरहि शीश ईशहीं नैहों ॥
नातो नेह नाथसों करि सब नाते नेह निबैहों ॥
यह छरुभार ताहि तुलसीजग वाको दास कहैहों ॥

कयाधु–(स्वगत) बालकके मुखसे यह कैसी अनोखी वाणी निकलती है, इस समय क्या करूं ?

इसे कैसे रोकूं ? यहां रहनेसे तो घोर उपद्रव होगा। (प्रकट) चलो बेटा ! मेरे संग चलो।

प्रह्लाद–मा ! मैं इस समय यहांसे कहीं नहीं जाऊंगा मुझको अमूल्य निधि यहां मिली है छोडकर जानेसे वह फिर न मिलेगी।

कयोधु–बेटा ! वह कौनसी निधि है ?

प्रह्लाद–देख मा! ये देख, तेरे सामने श्रीहरिचरणचिह्न शोभायमान हैं अहा ! वज्रांकुश रेखासमेत श्रीचरणकी कैसी अलौकिक शोभा होरही है ? मा! येही श्रीचरण प्रह्लादके प्राणाधार हैं, तूभी इनको प्रणाम कर। जो तू प्रणाम न करेगी तो मैं तेरे हाथसे कुछ न खाऊँगा।

कयाधु–(आश्चर्यसे) आहा ! यह कैसा आश्चर्य निजनयनोंसे देखरही हूँ साक्षात् हरिचरणचिह्न प्रह्लादके सामने शोभायमान हैं। (स्वगत) नारदका वचन सत्य हुआ प्रह्लादने दैत्यकुल पवित्र किया, परन्तु मैं अबला अब इसकी कैसे रक्षा करूं.हे प्रभु ! तुमहीं अनाथके नाथ हो।

प्रह्लाद–मा ! क्या तू प्रणाम नहीं करेगी ?

कयाधु–क्यों नहीं ? वत्स ! तेरे सुकृतसे आज मैं भी कृतकृत्य हुई. (प्रणाम करती है)

प्रह्लाद–जय दीनानाथ ! पतितपावन ! (प्रणाम करता है)

कयाधु–बेटा ! अब पुकारकरके हरिनाम मत लेना ।

प्रह्लाद–(कीर्त्तनके स्वरसे)

हरिनामें पाषाण तरै । माता वृथा काहे डरै ॥
जब पिताकी गोद जाऊँ । भुज उठाय हरिही गाऊं ॥
पिताभी हमारा ओ ! मा ! हरिगुन सुन प्रीत करै ॥

कयाधु–(घबराहटसे) अरे प्रह्लाद ! यह क्या कहता है ? तू हरिभक्त होकर मातृभक्ति भूलगया तेरे हरिने तुझको यही सिखाया होगा ? भला मैं हरिसे कहूँगी कि प्रह्लाद माको रुआता है ।

प्रह्लाद–(कयाधुके गलेसे लिपटकर) ना मा ! हरिसे यह बात मत कहना,हरि कोप करेंगे, जो तेरी यही इच्छा है तो मैं औरोंके सामने धीरे धीरे

हरिनाम लिया करूंगा परन्तु तेरे आगे तो मन खोलकर कहूँ।

कयाधु—हां इसकी चिंता नहीं जो तू मेरा कहा मानेगा तो मैं तुझको अच्छे अच्छे खिलौने दूंगी।

प्रह्लाद—मा! मुझको हरिपूजाकी सामग्री मँगा देना (करताल देकर नाचते नाचते कीर्त्तनके स्वरसे)

माभी हमारी हितू हरिभी हमारे हितू।
माको सुनाऊं हरि हरिको बानऊं मा॥

(गाते गाते प्रस्थान)

कयाधु—आहा! जो चरण बडे बडे योगियोंको ध्यानमें दुर्लभ हैं, वह चरण आज प्रह्लादके कारण मुझको सुलभ होगये, परन्तु स्त्रीकी पराधीनताको धिक्कार है जो ऐसी अमूल्य निधि पाकरभी मुझे पतिके भयसे छोडनी पडती है. (हिरण्यकशिपुको आते देख चरणचिह्न मिटादेती है.)

(हिरण्यकशिपुका प्रवेश)

हिरण्यकशिपु—रानी! प्रह्लाद कहां है?

कयाधु–महाराज ! अपने भाइयोंके संग आनंदसे खेलता होगा।

हिरण्य०–यह समय इसके केवल खेलनेका नहीं है अब इसको धीरे धीरे विद्या पढ़नी चाहिये, जो इसको विद्या न पढावेंगे तो इसके हृदयका अंधकार कैसे मिटेगा ? माता पिताका कर्तव्य पूरा करें आगे जो होना हो सो हो।

कयाधु–महाराज मेरी भी यही इच्छा है. विद्याबिना मनुष्य पशुके समान होता है।

हिरण्य०–अच्छा तुम जाकर गुरुको बुलाभेजो और वे आजायँ तब प्रह्लादकोभी यहां भेज देना।

कयाधु–जो आज्ञा महाराज ! (जाती है)

हिरण्य०–जो प्रह्लादको महलमें विद्याभ्यास करावें तो रानीके स्नेहसे उसमें बाधा पडेगी मातापिताके अति प्यारसे बहुधा बालक बिगड जाते हैं।

(षण्डामर्कका प्रवेश)

षण्डामर्क–आपका जय हो।

हिरण्य०–जय क्या तुम्हारे कहनेहीसे होगी ?

षण्डा०–(डरसे कांपकर) अन्नदाता ! भूलसे ये अक्षर निकल गयेथे आप क्षमा करो.

हिरण्य०–अच्छा शुक्राचार्य कहां हैं ? वह हमारे कुलगुरु हैं इसलिये उनसे प्रह्लादके विद्यारंभ करानेका विचार है ।

षण्डा०–वे तो तपकरने गये हैं परन्तु वे पिता हम पुत्र उनमें हममें क्या भेद है ? फिर आपने उनके लिये जो विचारा हो उससे हमको थोडा दीजिये हम प्रह्लादको विद्यारंभ करादेंगे ।

हिरण्य०–(स्वगत) ऐसे महापंडितके पुत्र ऐसे मूर्ख ! निस्संदेह दीपकसे काजल उत्पन्न हुवाहै परन्तु क्या करें आज शुभ मुहूर्त है, इसलिये प्रह्लादको विद्यारंभ कराते हैं शुक्राचार्य आवेंगे तब सच्ची शिक्षा होगी (प्रगट) तो अब विलंब क्यों ?

अमर्क–'शुभस्य शीघ्रम् ।

षण्ड–प्रह्लाद कहां है ?

हिरण्य०–अभी आता हागा

षण्ड—(धीरेसे) अच्छा ये तो हुआ गुरुदक्षिणाका क्या विचार ?

हिरण्य०—उसका इतना क्या विचार है पहलेसे कुछ अधिकही समझो.

षण्ड—आपकी जय हो, पापकी क्षय हो आपने हमको बडा संतुष्ट किया 'असंतुष्टा द्विजा नष्टाः'

अमर्क—हमारेसंतोषसे प्रह्लादकी विद्या सफल होगी

हिरण्य० (स्वगत) यह ब्राह्मणोंकी माया है, यह सब बातोंकी सिद्धिके लिये पहले अपनी पूजा कराते हैं और सिवायमें संतोषी बनते हैं ।

(प्रह्लादका प्रवेश)

हिरण्य०—बेटा ! गुरुपुत्रोंको प्रणाम कर ।

(प्रह्लाद प्रणाम करता है)

षण्डामर्क—चिरंजीवी हो ।

हिरण्य०—अब आप प्रह्लादको अपने संग पाठशाला-में लेजाइये हम जाते हैं । (प्रस्थान)

(प्रह्लादको लेकर षण्डामर्क जाते हैं)

तृतीयदृश्य ३.

पाठशाला ।

(षण्डामर्क, प्रह्लाद और विद्यार्थी)

षण्ड--(विद्यार्थियोंसे) देखो हम कहें जैसे बोलते जाओ ।

सब विद्यार्थी-अच्छा गुरु ! आप कहोगे जैसे बोलेंगे ।

षण्ड--बोलो ओ ना मा सी धं (ओं नमःसिद्धम्)

सब विद्यार्थी--बोलो ओ ना मा सी धं ।

षण्ड--अबे ! बोलो क्यों बोलते हो ?

सब विद्यार्थी--अबे बोलो क्यों बोलते हो ।

षण्ड--चुप लुच्चे नकल करने लगे ।

(सब विधार्थी चुप होजाते हैं)

षण्ड--अबे बोलते क्यों नहीं ?

सब विद्यार्थी--तो गुरु क्या बोलें? दोनों तरह हमको कठिन है ।

षण्ड--ओ ना मा सी धं ।

एक विद्यार्थी—(धीरेसे) पांडेकी टूटी टंग ।

षण्ड—(दो तीन बेंत मारकर) हां पांडेकी टूटी टंग, देख बच्चा पांडेकी टूटी कि तेरी टूटती है (और दो तीन बेंत जड देते हैं)

विद्यार्थी—(पपोलते २ सिकुडकर) अरे गुरुजी मेरे गुरुजी मरे, हाय ! हाय ! ! गुरुजी ! मरगये अब मत मारो दुहाई गुरुजीकी अब मत मारो मरगये ! ।

षण्ड—अबे गुरुजी मरे कि तू मरा ? लुच्चा अबतक लुच्चपन नहीं छोडता (और दो तीन बेंत मारते हैं)

विद्यार्थी—(स्वगत) भगवानकरैं गुरुजी सच्चेही मर जायँ ।

षण्ड--(प्रह्लादसे) कहो जी ? तुम कुछ नहीं बोलते बोलो (क)

प्रह्लाद-(स्वरसे)

कए कृष्ण विष्णु हरि ब्रह्म सनातन ।
मुक्तिलाभ होय किये करो हरिभजन ।

षण्ड—तुमको खबर नहीं कृष्ण तुम्हारे पिताका परम शत्रु है, उसका नाम कभी भूलकर मत लेना।

प्रह्लाद—हरे कृष्ण कृष्णशत्रु !हा! हा! ऐसा विचार कभी मत करिये. कृष्ण सबके हितू,सबके स्वाभाविक मित्र हैं जो कृष्ण शत्रु होते तो पिताका अबतक कहां पता लगता?।

षण्ड—बस जी चुप रहो. अब ऐसा ईठरठर लगा तो तुमभी बेत खाओगे।

प्रह्लाद—(स्वरसे)

कए कृष्ण कृपामय भक्तिरसायन।
वृथा भय दिखाओ गुरु कृष्ण भयदमन।

अमर्क—दादा! ये छोरा तो बडा नटखट निकला इसको सीधा करौ नहीं तो महाराज अपने प्राण लेंगे।

षण्ड—देखो प्रह्लाद! अपना भला चाहते हो तो अब कृष्ण कृष्ण कहना छोड दो।

प्रह्लाद-(स्वरसे)

कए कृष्ण स्मृति बुद्धि चिंता ज्ञान ध्यान।
कृष्णनाम छूटे भला कैसे रहैं प्रान।

गुरु दयाल मोहिं दास काज बिनमोल ।
एकबार प्रेमसहित बोलो हरि बोल ॥

अमर्क—क्यों प्रह्लाद ? तू ये हठ नहीं छोडेगा ?

षण्ड--देख प्रह्लाद ! जो तुझको उपासनाही करनी है तो किसी औरकी कर । कृष्णका नाम मत ले वह दैत्यकुलका बडा शत्रु है ।

प्रह्लाद--कभी नहीं ! जीव ईश्वरका सनातन दास है इसलिये मैं उसके सिवाय किसीको नहीं मानूंगा जड छोडकर शाखा कौन सींचे ? जब सब देवता दैत्य आप पराधीन हैं तब उनकी उपासनासे मेरा दुःख कैसे दूर हो सक्ता है ?

"बनै तो रघुबरसे बनै, बिगडे तो भरपूर ।
आनदेवसे जो बनै, वा बंनबे में धूर"

अमर्क—दादा लातोंके देव, बातोंसे नहीं मानते, यह पूत यों समझनेवाला नहीं है, जो इनको समझाया चाहते हो तो बेत उठाओ ।

षण्ड—सच है, 'फूलै फलै न वेत,

यदपि सुधा बरसै जलद।
मूरख हृदय न चेत,
जो गुरु मिलैं विरिंचि सम॥'

देख प्रह्लाद हमने तुझे राजकुमार समझकर अबतक कुछ नहीं कहा, परन्तु तू अपना हठ न छोडेगा तो तुझको राजवैभव, राजपरिवार, राजसुख छोड़कर बहुत दुःख सहना पडेगा।

प्रह्लाद–गुरु! हरिभजनके सिवाय इन बातोंमें सुख कहां है? संसारी सुख सुखका आभासमात्र है, परन्तु वोभी क्षणिक और उसमेंभी सुखके आभाससे हजारगुणा दुःख भरा है इसलिये कृपाकरके आप इस जंजालसे मेरा पीछा छूडाइये· जितनी जल्दी पीछा छूटैगा उतनाही आपका विशेष उपकार मानूंगा।

षण्ड–प्रह्लाद! यह क्या बकता है? जो सबलोग संसार छोड बैठें तो संसारका निर्वाह कैसे हो? मनुष्य को सबतरह ऊंच नीचका विचारकर काम करना चाहिये तू अभी भोला बालक है, इसीसे ऐसी ऐसी बातें

कहता है. भला संसार छोडनेमें तेरी क्या दशाहोगी? जब जाडेसे तेरे हाथ पाँव सूने होजायँगे, दाँत कडकडाने लगेंगे, शरीर काम न देगा, अथवा वर्षाकी अंधेरी रातमें तुझको कुछ न सूझेगा, मुसलधार पानीसे तेरे कपडे और तेरा शरीर तर होजायगें,हवा के झकोरोंसे तेरे पाँव न टिक सकेगें, गरमीमें प्रचंड धूप और लूसे तेरा शरीर जलने लगेगा, अथवा रोगके कारण तुझमें उठने बैठनेकी सामर्थ्य न रहेगी, तुझको बारम्बार भूँख प्यास सतावेगी, तब तेरी कौन सुध लेगा? तेरा कैसे निर्वाह होगा? और ऐसे धर्मके झमेलेमें पडनेसे तेरे क्या हाथ आवेगा?

प्रह्लाद–गुरुजी। अंबरीष और जनककी तरह संसारी काम निभसके तो चिंता नहीं, संसारी काम करने चाहिये। परन्तु सब काम भगवत्इच्छाके अधीन समझकर उनमें लिप्त न होना चाहिये, उनके कारण भगवत्सेवामें बाधा पडती है, इसीलिये मैं इसके छोडनेका विचार करता हूं और धर्मके झमे

लेमें हाथ लगनेकी तो क्या पूछते हो? प्राणप्रिय हरि मिल गये तब कौनसी वस्तु दुर्लभ रही? श्रीहरि सबके स्वामी, सबके कारण, सबके नियंता हैं। हरिके विराटरूपसे संसारकी कोई वस्तु बाहर नहीं हैं; हरिदासोंके आगे अठारहों सिद्धि हाथ बाँधे खडी रहती हैं, देवता उनकी सेवा करनेमें अपना अहोभाग्य समझते हैं, परन्तु वे किसीकी ओर आँख उठाकर नहीं देखते. फिर भला जिनको हरिचरणोंकी सेवाका सुख मिलजायगा उनको सुख दुःख जाननेके लिये अपने शरीरकी सुध कहाँ रहेगी? और देह आत्मा अलग जान पीछे देहके दुःखसे आत्मदुःख कैसे होगा? संसारके दुःख और नरककी घोर यातनाके आगे ये दुःख किस गिन्तीमें हैं? श्रीहरिकी अपार दया तो देखिये कि, जब बालक गर्भमें आता है तब उसके जन्मसे पहिले उसकी माताके स्तनमें दूध भर जाता है और जब विमुख प्राणियोंपर उनकी ऐसी कृपा है. तो जो लोग

विश्वास सहित सब तजकर हरिको भजेंगे उनकी रक्षा क्यों न होगी ? जो धोखा है अपने मनका है. जो दुःख है सो अपने मनकी कचाईसे है. श्रीहरिकी ओरसे हित होनेमें कुछ संदेह नहीं हो सक्ता।

अमर्क–दादा ! इसको बड़ी बातें बनानी आती हैं इसके पेटमें तो सवाहाथकी डाढी है। तुम इसकी बातोंमें मत आना,असंभव बातोंके भरोसे ये आपभी मरेगा और हमको भी मरवावेगा।

षण्ड–भय्या ! इस पागलकी बातें क्या मानने लायक हैं ? भला आगमें हाथ देंगे तो वह कैसे न जलेगा।

प्रह्लाद–हाथ क्या ? प्रतिबंधक मणि पास रहने-हीसे कोई भी वस्तु नहीं जलती।

षण्ड–अच्छा इस झगडेसे क्या मतलब? चल हम तुझको महाराजके पास ले चलते हैं वहां तू अपनी आप निबेट लेना।

प्रह्लाद–चलिये पिताके पास चलनेको मैं तैयार हूं, मैं प्राण दूंगा पर हरिभजन कभी न छोडूगा, शरीरकी

की क्या ? यह तो क्षणभंगुर है, इसका नाश तो एक दिन होनाही है, फिर यह देह हरिके हेत लगे तो इससे अधिक और क्या लाभ होगा ? यह देह हरिचरणोंकी प्राप्तिको रोकती है इसलिये मुझको इसके रखनेका कुछ लालच नहीं है । हे हरे ! दया करो, शीघ्र अपने चरणकमलोंमें स्थान दो, यह संसार दावाग्निके समान मुझको भस्म कर रहा है । आहा ! मैं कब निज नाथ, निजमाता पिता, निजरक्षक, निज स्नेहीके दर्शनसे लोचन सफल करूंगा ? मैं कब निजा मस्तकसे युगलचरण स्मरण करके प्रेमाश्रुद्वारा उन चरणोंको धोऊँगा ? मैं कब सब ओरसे मन समेटकर हरिचरणोंमें लवलीन हूँगा ? श्रीहरि कब अपनी शीतल दृष्टिसे मुझको देखकर सरस, गंभीर, मधुर वाणीद्वारा निजके कार्यकी आज्ञा देंगे ? मैं कब सुखद प्रभुकी मंद मुसकान निरख कर अमृतसागरमें गोता खाऊंगा ?

षण्डामर्क--बस, बस, बहुत बकवाद मत कर, चल. अब महाराजके पास लेचलकर हम तेरा दुःख मिटाये देते हैं ।

प्रह्लाद--गुरुविना ऐसी दया कौन करै ।

(षण्डामर्क दोनों हाथ पकडकर प्रह्लादको घसीट ले जाते है)
. और सब विद्यार्थी खेलते कूदते उनके पीछे जाते हैं)

चतुर्थदृश्य ।

(हिरण्यकशिपु, प्रह्लाद और षण्डामर्क)

हिरण्य०—(प्रह्लादको गोदमें लेकर) बेटा ? इतने दिनमें तुम क्या पढे ? तुम्हारी मा तुमको बड़ा बुद्धिमान समझती है और हमाराभी ऐसा ही विचार है जो कुछ पढे हो सो सुनाकर हमारा मन खुशी करो ।

प्रह्लाद—(हाथ जोडकर) पिता ! हरिनामके सिवाय इस संसारमें पढनेयोग्य क्या है ?

तुलसी सोई चतुरता, रामचरण लवलीन ।
पर मन पर धन हरनको, वेश्या बड़ी प्रवीन ॥

हिरण्य०-(क्रोधसे प्रह्लादको धरतीमें पटककर, क्या क्या? रे कुलांगार! हरि हमारे सदाके शत्रु,हरि तेरे पूज्य उनहींका नाम तेरी परम शिक्षा ! तू हरिकी इतनी बड़ाई करता है परंतु हरिभक्त बहुतकरिके संसारकामोंमें निकम्मे होते हैं, उनको बात बनाकर काम निकालना नहीं आता,वह लोगोंको फुसलाकर अपने वशवर्ती नहीं कर सक्के, लोगोंमें हवा बाँधकर अपना यश नहीं फैला सक्के, लोगोंको धोखा देकर द्रव्य नहीं कमा सक्के, वह तो सत्य और धर्मनिष्ठ बनकर अपने सत्कर्मोंको छिपाते हैं! अपने ऊपर तरह तरहकी विपत्ति उठाते हैं,संसारमें अपनी हँसी करवाकर कुलकोकलंक लगाते हैं, धर्मकी कमाईपर रहकर जन्मभर दुःख पाते हैं।

प्रह्लाद-पिता ! क्या ये दोषहैं? हाँ पापपूरित संसारमें तो ये निस्संदेह दोष हैं, यहाँ सत्य और धर्मको कौन पूछता है ? कृतघ्न सुख भोगते हैं, विश्वासघाती धनवान् बनते हैं, ठगई विद्या चतुराई समझी जाती है,धनवान् घोर पाप करके अपने धनके बलसे धर्मात्मा बन सक्केहैं

स्वार्थी कुटिल परोपकारी कहाते हैं, झूँठी बातें बनाना परम पुरुषार्थ समझा जाता है, जलनके मारे कोई किसीकी भलाई नहीं देखसक्ता, इस दशामें धर्मात्मापुरुषके एक मार्गी होनेपर लोग ठट्ठा उडावें, उसको कुल कलंकी ठहरावें, अनेक तरहके दुःख देवें, अथवा वोही अपनी धर्मरक्षाकेलिये सब छोडकर श्रीहरिका आश्रय ले तो क्या आश्चर्य है ? सौ नकटोंमें एक नकृक निभाव कठिन होता है, परन्तु इन बातोंसे क्या उसका कुछ स्वरूप घट जायगा ? कभी नहीं, धर्मका अलौकिक रत्न किसीप्रकारके लोभ, लज्जा अथवा भयसे छोड़ने लायक नहीं है, क्या संसारी मनुष्योंकी झूँठी झिझक अथवा क्षणिक संसारीसुखके लिये कुकर्म करके आत्मप्रसाद खोना चाहिये ? जो लोग जिस बातको नहीं जानते उनके कहनेका उसविषयमें प्रमाण क्या? पिता? संसारी लोग इस समय निजस्वरूप भूलकर पापपंकमें फँस रहे हैं, परंतु उनके पापोंका फल उनको अवश्य भोगना पडेगा, श्रीहरिकी निर्हेतुक कृपा विना जीवका निस्तार नहीं ।

हिरण्य०—रे कुलकलंक ! तू अपना मुख हमको मत दिखावै, जिस हरिने हमारे भाई हिरण्याक्षको मारा था, उसकी तू इतनी स्तुति करता है, संसारकी उन्नतिके उपायोंको दुःखदाई बताता है, दुष्ट! तेरे उत्पन्न होनेसे दैत्योंका पुण्य नष्ट होगया ।

प्रह्लाद—पिता ! आप पुण्यवान् हो इसीसे यह दीन आपके घर जन्म लेकर हरिभजन करता है, पापकी कमाई कभी सुखदायक नहीं होती, पापी पहले बढते हैं, परंतु पीछेसे समूल उखड पडते हैं ।

हिरण्य०—(कानोंपर हाथ धरकर) धिक्! धिक्!! अधम फिर वोही बात ! हिरण्यकशिपुके भयसे आज धरती आकाश कांपते हैं, परंतु तुझको कुछ भय नहीं होता, रे कुलद्वेषी बालक ! अपनी कुशल चाहता है तो अब भी हरिनाम छोड ।

प्रह्लाद—पिताजी ! कुशलता तो हरिचरणकी दासी है, और शरीर हरिका दियाहुआ है, हरिके रंगमें रंग गया, हरिभजन जीवका स्वभाव है, फिर आपका यह उपदेश सुनकर स्वामिविद्रोह किससे होसकेगा ?

हिरण्य०–रे शठ! हरि तेरे स्वामी हैं? हा! विश्वाधिप हिरण्यकशिपुका पुत्र हरिदास! धिक! धिक! दुराचारी! तैंनें हमारे कुलका सब गौरव डुबो दिया, तेरे कारण हमारा मान गया, कीर्ति गई, यश गया, बडाई गई। हा! कुलकंटक! तेरे उत्पन्न होनेसे क्षणभरमें हमारा सर्वस्व जाता रहा, जो तू अपने कुलकी कुछ मर्यादा रक्खा चाहता है तो अबभी हरिका पक्ष छोड।

प्रह्लाद–पिता! आप ब्रह्माका वर पाकर इतने फूले फिरते हो, परन्तु जब जीव संसारी बंधनसे छूटकर श्रीहरिकी सेवामें जाता है, तब वोही ब्रह्मादि देवता उसका पूजन करके उसके भाग्यकी सराहना करते हैं, इसलिये जीवके हेतु हरिदाससे बढकर कोई पदवी नहीं है। और आप क्या आशाका दास बनकर अपनी कुछ बडाई समझते हो? जब आपने अबतक काम, क्रोध, लोभ, मोहादि प्रबल शत्रुओंको नहीं जीता तब आपकी बड़ाई कहां रही? आप बुद्धिभ्रम-

से श्रीहरिको शत्रु समझते हो, परंतु हरिके समान पतितपावन, दीनबन्धु, आपत्सखा, सत्यस्नेही, अकारणमित्र, संसार में कौन होगा ? श्रीहरिकी कृपा विना किसी जीवका क्षणभर निर्वाह नहीं होसक्ता। आप इस देहका बडा अभिमान करते हो, भला यह क्या है ? इसके क्षणभर स्थिर रहनेका क्या विश्वास है ? आज आप चक्रवर्ती बन गये, परंतु मरे पीछे यह वैभव आपके किस काम आवेगा ? आप कहांसे आये ? कहां जाओगे ? क्या लाये ? क्या लेजाओगे ? आप कौन हो ? आपका कौन है ? जब आपको इन बातोंकी कुछभी खबर नहीं तो फिर आपको कौन-सी बातपर इतना अभिमान है ? और नाशवान् पदार्थोंके ऊपर आप इतने क्या फूले फिरतेहो ? नरककी घोर यंत्रणाका कुछ विचार करिये जब वहां दारुण दुःख भोगोगे. धर्म, धर्मस्वरूप नारायणके सिवाय और कोई आपके काम न आवेगा, वहां आपकी यह प्रभुता कुछ न चलेगी, पिता ! उत्तर दो क्या

नरकके भयसे कुछ नहीं बोलाजाता ? जो कुछ भय हो तो प्रीतिपूर्वक नारायणनाम उच्चारण करो, नारायंणनामसे अजामिलसे पापी क्षणभरमें तर जाते हैं, (स्वरसे) हरिबोल! हरिबोल !! हरिबोल !!!

हिरण्य०-(क्रोधसेस्वगत) यह दोष प्रह्लादका नहीं है बालकको इतनी बातें कहां उपज सक्तीहैं ? यह दोष इन दुष्ट ब्राह्मणोंका है, ब्राह्मण अतःकरणसे हरिके पक्षपाती होतेहैं, इन लोगोंने हमारा अन्न खाकर प्रह्लादको हरिभक्ति मिलाई, इसलिये हम पहले इनहींके प्राण लेंगे

प्रह्लाद-पिता ! इन ब्राह्मणोंपर इतना कोप क्यों ? यह अपराधी तो हैं परन्तु आपके नहीं, श्रीहरिके अपराधी हैं,इन्होंने संसारी तुच्छ पदार्थोंकेलिये निजधर्म छोड़ादिया है,आहारादि संसारमें प्राणीमात्रको अपने आप मिलते रहतेहैं उन्होंने इनकोही मनुष्यजन्मका फल समझलिया, पिता ! जो पक्षी आप पिंजरेमें बंद है वह दूसरेको पिंजरेसे किस तरह निकाल सक्ता है ?

आप इनपर वृथा संदेह कराकरो, यह तो मेरी पुकार करनेको मुझे आपके पास लाये हैं, मेरा गुरु तो श्रीहरि है, उसीने मुझको श्रीहरिभजन सिखाया है।

हिरण्य०–क्या पाखंड! हरिने तुझको हरिभजन सिखायाहै. अच्छा! हम अभी तेरा हरिभजन छुडाते हैं (प्यारसे) बेटा! अबभी हमारा कहा मान, हरि-भजनका ऐसा हठ न कर।

प्रह्लाद–पिता! पिता!! जबतक मेरे देहमें प्राण हैं मैं कभी हरिभजन न छोडूंगा।

षण्ड–प्रह्लाद! क्या पिताकी आज्ञा मानना तेरा धर्म नहीं है? फिर तू पिताकी आज्ञाके विपरीत इतना हठ क्यों करता है?

प्रह्लाद–गुरु! पितासे यह देह उत्पन्न हुआ है इसलिये पिताकी आज्ञा मानना देहका धर्म है, परन्तु आत्मा परमात्माका सनातन दास है, इसलिये ईश्व-रकी उपासना करना आत्माका मुख्य धर्म है, मुख्य-धर्मको छोडकर साधारण धर्मका निर्वाह मुझसे नहीं हो सक्ता।

हिरण्य०--जाओ षण्डामर्क ! शीघ्र जाओ, इस दुष्टका नाश करनेकेलिये घातकगणको अभी भेजो। बाहरके शत्रुसे इतनी हानि नहीं होती, जितनी अंतरंगसे सहजमें हो जाती है, यह प्रह्लाद हमारा पुत्र नहीं परमशत्रु है, इसलिये इस पापीको मरवाडालेंगे तब हमारे मनमें संतोष आवेगा।

(षण्डामर्कका प्रस्थान)

प्रह्लाद—पिता ! मैं पापी हूँ इसलिये नरकके भयसे बारंबार अधम उधारण हरिका नाम उच्चारण करता हूँ, पिता ! आपकी आज्ञासे मैं अभी यह अधमशरीर छोडदूंगा, इस कारण आपके चरण देखनेका अवसर फिर मुझको न मिलेगा, पिता पिताकर मैं आपको न पुकार सकूंगा, आपसे यह देह उत्पन्न हुई है और इस देहसे मैंने हरिभक्ति पाई है, इसलिये मैं आपका बहुत उपकार मानता हूँ, पिता ! मैं अतिबालक हूँ, इसहेतु आपकी कुछ सेवा मुझसे न बनी, आपका कुछ उपकार मैं न करसका तथापि अंतस-

मय मैं अतिदीन होकर यह प्रार्थना करता हूँ कि, आप प्रेमपूर्वक एकबार हरिनामसंकीर्त्तन करो आपके मुखसे हरिनाम सुनते सुनते अपने मुखसे हरिगुण गाते गाते मैं यह पापी देह पारत्याग करू।

(घातकगणका प्रवेश)

प्रह्लाद–पिता ! ये घातक आगये, थोडे पल मेरा जीवन बाकी रहा है, इसलिये अब मैं अंतिम भिक्षा यही माँगता हूँ कि, आप एकबार निजमुखसे हरि-नाम सुनाओ (स्वरसे)

हरिबोल ! हरिबोल ! ! हरिबोल ! ! !

हिरण्य०–घातकगण ! इस दुष्टको अभी श्मशानमें लेजाओ और इसके शतखंड करके इसका रुधिर पूरित मस्तक हमको लां दिखाओ, जो तुम्हारी ओर से इसमें कुछ देर होगी तो तुम मारे जाओगे।

घातक–जो आज्ञा महाराज !

(प्रह्लादके हाथ बांधकर घातकगण एकओरसे ले जाते हैं और हिरण्यकशिपु दूसरी ओरसे जाता है).

पंचमदृश्य ५.

श्मशान ।

प्रह्लाद और घातकगण ।

प्रथमघातक–भाई ! यह बालक तो अतिकोमल है, इसपर हम शस्त्र कैसे चलावेंगे ?

द्वितीयघातक–राजकुमार ! तुमने अपनी रक्षाका क्या उपाय विचारा ? तुम मरजावोगे तब हरि तुम्हारे क्या काम आवेंगे ?

प्रह्लाद–हमारे उपाय हरि हैं, हमारी गति हरि हैं, हमारे लोक परलोकके साथी हरि हैं, हमको अपनी कुछ चिन्ता नहीं ।

प्रथमघातक–हरि तुम्हारे प्राणसे अधिक नहीं हो सक्ते फिर तुम हरिके लिये अपने प्राण क्यों देते हो?

प्रह्लाद–श्रीहरि हमारे प्राणसे बहुत अधिक हैं, इस लिये हरिके हेतु प्राणदान अति सामान्य मालूम होता है ।

द्वितीयघातक–तो तुम्हारे प्राणसंकटपर हरि कुछ सहायता क्यों नहीं करते? हरि बडे निष्ठुर हैं।

प्रह्लाद–राम! राम!! ऐसा वचन मत कहो, श्रीहरिके समान दयालु संसारमें कौन होगा? उन्होंने त्वरा जानकर निजचरणोंमें वास देनेको यह उपाय रचा है!

प्रथमघातक–भाई! प्रह्लाद तो हठ नहीं छोडता अब हम क्या करैं?

द्वितीयघातक–राजकुमार! हठ क्यों नहीं छोडते? क्या तुम कुछ पागल होगये हो? तुम मरजाओगे तब ऐसी देह ऐसे माता, पिता, ऐसे कुटुंब, परिवार, ऐसा राजवैभव कहां मिलैगा?

प्रह्लाद–(कीर्त्तनके सुरमें)

हरि हमारे पिता माता, हरि हमारे बंधु भ्राता।
हरि हमारे प्राणजीवन, हरि हमारे बसरहे मन।
हम न चाहैं तुच्छ जीवन, लवलगी हरिचरणोमें अब।
हरिकी वस्तु हरिही दे हैं, हरिकी सुखद शरण लेहैं।

प्रथमघातक—जो यह नहीं मानता ता इसके लिये हम क्यों मरैं?

प्रह्लाद—(ध्यानमुद्रासे बैठकर)

श्रीहरि सुनिये बिनय हमारी ।
भली करत यह देह विरोधी हरत दया विस्तारी ।
हरिसुमिरनकी आश न पूजी यह पछतावो भारी ।
जाउँ जहां अब निज करनी वश रहूं चरण हियधारी ।
मीन न जियत वारिबिन जैसे त्यों मति होय हमारी ।

(घातकोंसे) भाई ! अस्त्रघात करो ।

(प्रथमघातक जोरसे प्रह्लादके गलेपर तलवार मारता है, परन्तु वह टूटकर अलग जाय पडती है)

द्वितीयघातक—यार ! यह तो बडा अचरज हुआ प्रह्लादके कंठसे लगकर तलवार टूटगई ।

प्रथमघातक—तेरी तलवारमें मोर्चा लगा होगा अब मेरा हाथ देख. (तलवार खैंचकर मारता है, परन्तु वह टूटकर अलग गिर पडती है)

द्वितीयघातक—तेरी तलवारमें तो मोर्चा नहीं लगाथा फिर यह क्यों टूटगई ?

प्रथमघातक--भाई ! यह बालक अमर है, इसपर हमारे शस्त्र नहीं चलैंगे, चलो महाराजसे कहंदो, अब उनकी इच्छा होय सो करैं ।

द्वितीयघातक--यह देखो, महाराज यहांही आंते हैं, बस, अब सब निबटेरा उनके आगे होजायगा ।

हिरण्य०--(आकर) क्यों रे ! प्रह्लादको अबतक क्यों नहीं मारा ? क्या इसके बदले तुम आप मरा चाहते हो ?

दोनोंघातक-(हाथ जोडकर) महाराज ! प्रह्लाद हरिमंत्र जपता है, इसलिये इसपर हमारे शस्त्र नहीं चलते, देखिये दोनों तलवारें टूटगईं ।

हिरण्य०-(टूटी तलवार देख अचरजसे) ये क्या ? सच्चेही तलवार टूटगईं, कुछ और कारण होगा ? (प्रह्लादसे) बेटा ! अबभी हरिनाम छोड हम तेरे सब अपराध क्षमा कर देंगे ।

प्रह्लाद-(कीर्त्तनके सुरमें)

श्रीहरि मम हृदय वसैं, हरि बिसरे हिय विनशै।
अजहुँ पिता तजहुँ भूल, हरि नहिं हरि प्राणमूल ।
जिनके जिवाये जिये, तिनसों कहा वैर किये ।
हरि कृपालु शरण लेत, अधमहुको अभय देत ।
मधुरवचन बोलो हरि, हरि बोलो बोलो हरि ।

हिरण्य०-धिक् पापिष्ठ ! फिर वोही दुराग्रह फिर वोही नाम ! हम अभी तुझको हाथीके पांवके नीचे देकर पिसवा डालेंगे ।

प्रह्लाद-आपकी इच्छा होय सो करो, मुझकोभी इस असारसंसारमें कुछ प्रीति नहीं है ।

(हिरण्यकशिपु हाथ पकडकर प्रह्लादको साथ लेजाता है)

(घातकगण पीछे पीछे जाते हैं)

षष्ठदृश्य ६.

हस्तिशाला.

(महावत और मदमत्त हाथी)

महावत-(हाथीसे) क्यों रे पागल ! क्यों चुप है ? आज क्या कुछ भूँखा रहगया ? इतना चारा ठिकाने लगादिया तोभी भूँखाही रहा ! नहीं; भूँखा होता तो जरूर चिंघारता बालक भूँखा होता है तब रोता है, अच्छा पट्ठा अच्छा ! चैन करो ।

(प्रह्लादकी मुश्के बाँधकर दोनों घातक लाते हैं)

महावत-हैं ! ये क्या ? राजकुमारकी यह दशा ?

प्रथमघातक-प्रह्लाद हरिभजनका हठ नहीं छोडता इसलिये महाराजने इसको हाथीके पांवके नीचे ... ।

महावत-राम ! राम ! ! हमसे तो ऐसा खोटा काम कभी नहीं हो सकेगा, भला प्रह्लादने हरिभजन करनेमें क्या बुरा किया ? अपने पैदा करनेवालेको सब भजते हैं, फिर प्रह्लाद हमारा मालिक ! राजा और राजाके बालकमें क्या भेद है ? जिस प्रह्लादको गोदमें

लेकर हम हाथीकी पीठपर चढाते थे उसको हम आज हाथीके पांवतले दें? ना भाई! राजा हमारे प्राण लें तो भलेही लें हमसे ऐसा खोटाकाम कभी नहीं बनैगा ऐसी नौकरीको हमारी रामराम (जाता है.)

प्रथमघातक-भाई! महावत तो भागगया अब हम क्या करें? जो प्रह्लाद बच जायगा तो हम मारेजाँयगे।

द्वितीयघातक-हमारे क्या हाथ नहीं हैं, जो काम महावत करता हम करेंगे! राकुजमार! आँखें बंद करके क्या शोच विचार कर रहे हो चलो तैयार हो।

प्रह्लाद-भाई! हरि इच्छामें मुझको कुछ विचार नहीं जो उसकी प्रसन्नताहै उसीमें प्रसन्नहूं (ध्यानमुद्रासे)

हरि ये अपनी संपति लीजै।
जग अनित्य सबवस्तु अहितकर तिनसों मन न पतीजै
दावानल ज्योति चतुर्दिश शुष्क होय तनु छीजै॥
दीन जान चरणनकी सेवा अब करुणानिधि दीजै॥
हरि यह अपनी संपति लीजै।

प्रथमघातक–भाई ! हमैं आये बहुत देर हुई महाराज आतेही होंगे, प्रह्लादके बालबच्चे नहीं हैं परन्तु हमारे तो हैं हम मारे जायँगे तब उनका पालन कैसे होगा ?

प्रह्लाद–मूर्खों ! सबके पालन करनेवाले भगवान् हैं, तुम अपने कुटुंबके पालनकी चिंता करतेहो, परंतु भगवान्‌ने अन्नादिक न उत्पन्न किये होते तो कुटुंबका पालन कैसे कर सक्ते ? उसको सबकी चिंता है और उसने सबके वास्ते पहिलेहीसे उचित उपाय रच रक्खे हैं, मनुष्य अपनी मूर्खतासे अपने ऊपर बोझ समझकर भ्रमजालमें फँसजाता है ।

द्वितीयघातक–वाह ! राजकुमार वाह! अच्छी राह बतातेहो, आपका कहा माने तो पहले हम मारे जाँय फिर अपने छोटे छोटे बच्चोंको अनाथ छोडैं, हमको अपने प्राण ऐसे दुर्भर नहीं, हम अभी राजाकी आज्ञा पूरी करके सब जंजालसे छूटे जाते हैं ।

प्रह्लाद–अच्छा भाई ! तुमको अपनी भलाई दीखे सो करो, मैं अपना मस्तक नीचा झुकाकर बैठताहूं, तुम निस्संदेह मेरे ऊपर हाथी हूल देना।

(दोनों घातक हाथीको प्रह्लादपर हूलते हैं)

प्रह्लाद–(शिर झुकाये हुये सुरसे)

हरिबोल ! हरिबोल !! हरिबोल !!!

(पुनः) हरिबोल ! हरिबोल !! हरिबोल !!!

(पुनश्च) हरिबोल ! हरिबोल !! हरिबोल !!!

हाथी पाँवसे प्रह्लादको स्पर्श करतेही, भयभीत होकर अपना पाँव हटाता है और अपनी शुंडसे प्रह्लादको अपनी पीठपर बैठा लेता है।

प्रह्लाद–(हाथ जोडकर)

हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।
हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे॥

हिरण्य०–(जलदी आकर) घातक ! यह कैसा आश्चर्य ! कैसा आश्चर्य !! हमारे देखते देखते हाथीने अपनी शुण्डसे उठाकर प्रह्लादको पीठपर बैठालिया।

प्रह्लाद–(हाथ जोडकर) पिता ! इसमें कुछभी आश्चर्य नहीं है; हरि सबके ईश्वर हैं, उनकी इच्छासे हाथीने ऐसा किया तो कौनसी बडी बात हुई ।
(कीर्त्तनके सुरसे)

हरिकी महिमा तनक निहारो ।
अजहुँ छाँड भ्रम मोह दुराशा हरिचरणन चित धारो ।
हरिसम को दयालु जगमाहीं चित दे नेक बिचारो ।
बिगरेहू सब बात बनत जब हरि विश्वास सँभारो ।
यवभर शुण्ड रही जलऊपर तब गजराज उबारो ।
एकबार सबमिल सप्रेम अब श्रीहरिनाम उचारो ।
हरिकी महिमा तनक बिचारो ।

हिरण्य०--धिक् ! पामर ! फिर वोही दंतकथा, हम इसकी बात नहीं सुना चाहते घातकगण, इसको शीघ्र कैद करो ।

(हिरण्यकशिपु जल्दी जाता है और घातकगण प्रह्लादके हाथमें हथकडी डालकर अपने साथ लेजाते हैं)

सप्तमदृश्य ७

कारागार.

(प्रह्लाद एकाकी बैठा है)

प्रह्लाद–आहा ! प्रभुके ध्यानका कैसा विलक्षण माधुर्य है, हे नाथ ! सदा ऐसाही एकांत कारागार हो और आपकी माधुरी मूर्तिका दर्शन हृदयमें होता रहै, प्रभु ! मैं इस मनुष्य रचित कारागारमें कुछ नहीं डरता, परन्तु आपके कठोर कारागारसे बहुत भयभीत हूँ. हा! दीनदयालु ! क्या कभी मुझसे घोर पापियोंको भी उससे छुट्टी मिलैगी ? नाथ ! मैं भूला आपकी शरण आये पीछे पापियोंको क्या भय है ?

येही समझ चरण चित लायो । नाहिन नाथ अकारणको हित तुमसम निगम पुराणन गायो । जनक जननि सुत दार बंधु जग भये बहुत जहँ जहँ हों जायो ॥ सब स्वारथरत प्रीति कपट चित हरि भजबो काहू न सिखायो । सुर मुनि मनुज